प्रथम अध्याय

वाक्यावधारणाएँ

क) वाक्य के सम्बन्ध में भारतीय विद्वानों की धारणाएँ

1- कात्यायन की धारणा, 2- पाणिनि की धारणा,

3- पतन्जलि की धारणा ,

ख) वाक्य के सम्बन्ध में पश्चिमी विद्वानों की धारणाएँ :-

1- ब्लूमफील्ड की धारणा,

2- हॉकिट की धारणा,

3- नॉमचोमस्की की धारणा ।

प्रथम अध्याय

वाक्यावधारणाएँ

क§ वाक्य के सम्बन्ध में भारतीय विद्वानों की धारणाएँ :

वाक्य के बारे में भारतीय विद्वानों ने विविध प्रकार के विचार व्यक्त किये हैं । कात्यायन एवं पतंजलि ने भारत के प्राचीन आचार्यों के वाक्य सम्बन्धी विभिन्न मतों का संकलन करते हुए वाक्य के चार लक्षण बतलाये हैं, इनमें पहला लक्षण यह है कि क्रिया, अव्यय, कारक और विशेषण पद जहाँ एकत्र हों उसे वाक्य कहते हैं ।[1] दूसरा लक्षण यह है कि जहाँ उक्त चारों पदों के साथ-साथ क्रिया विशेषण भी सम्मिलित हो उसे वाक्य मानना चाहिए ।[2] तीसरा लक्षण यह है कि जहाँ विशेषण सहित क्रिया हो वहीं वाक्य होता हैं ।[3] इस लक्षण में अव्यय, कारक और विशेषण को क्रिया के ही विशेषण मान लिया गया है । चौथा लक्षण

1- "आख्यातं साव्ययकारकविशेषणं वाक्यम् ।" महाभाष्य, 2-1-1 ।
2- "सक्रियाविशेषणं च ।" -- -वही -
3- "आख्यातं सविशेषणम् ।" -- -वही -

यह है कि जहाँ एक क्रिया हो उसी को वाक्य कहते हैं ।[1] जैसे 'बोलो' यहाँ 'बोलो' एक पूरा वाक्य है । न्यायभाष्कार वात्स्यायन का विचार है कि साकांक्ष पदों के समूह को वाक्य कहते हैं ।[2] आचार्य जगदीश ने 'शब्दशक्तिप्रकाशिका' में भी वाक्य का यही लक्षण किया है कि आकांक्षा - युक्त शब्दों के समूह को वाक्य कहते हैं ।[3] साहित्य-दर्पणकार आचार्य विश्वनाथ ने लिखा है कि योग्यता, आकांक्षा और आसक्ति से युक्त पदों के समूह को वाक्य कहते हैं ।[4] अमरकोशकार अमरसिंह ने लिखा है कि सुबन्त या तिङन्त पदों के समूह को अथवा कारक युक्त क्रिया को वाक्य कहते हैं ।[5]

भर्तृहरि ने अपने वाक्यपदीय में प्राचीन आचार्यों के वाक्य-लक्षण सम्बन्धी आठ मतों का उल्लेख किया है — 1/ क्रियावाचक शब्द को वाक्य कहते हैं, 2/ क्रिया तथा उसके कारकादि समूह को वाक्य कहते हैं, 3/ क्रिया, कारक आदि के समूह में रहने वाली जाति को वाक्य कहते हैं, 4/ क्रिया आदि के एक अखण्ड समूह शब्द या स्फोट को वाक्य कहते हैं, 5/ क्रिया आदि के एक विशेष क्रम को वाक्य कहते हैं, 6/ क्रिया आदि के अखण्डनीय बुद्धिगत समन्वय को वाक्य कहते हैं,

---

1- "एकतिङ्" । महाभाष्य, 2-1-1 ।

2- "पदसमूहो वाक्यमर्थसमाप्तौ ।" मंजूषा, ।

3- "मिथः साकांक्षशब्दस्य व्यूहो वाक्यम् ।" शब्दशक्तिप्रकाशिका, श्लोक ।

4- "वाक्यं स्याद् योग्यताकांक्षासत्तियुक्त पदोच्चयः ।" साहित्यदर्पण 2-1

5- सुप्तिङन्तचयो वाक्यं क्रिया वा कारकान्विता ।" अमरकोश ।

7/ आकांक्षायुक्त पहले ही पद को वाक्य कहते हैं, 8/ आकांक्षायुक्त पृथक् – पृथक् सम्पूर्ण पदों को वाक्य कहते हैं ।[1] इसके अतिरिक्त प्राचीन आचार्यों में से मीमांसासूत्रकार महर्षि जैमिनी का मत है कि एकार्थक पदों के समूह को वाक्य कहते हैं ।[2]

वैयाकरणों में से पाणिनि का विचार है कि वाक्य में केवल एक तिङन्त पद या एक क्रिया ही नहीं होती, अपितु एक से अधिक क्रियायें भी हो सकती हैं ।[3] जैसे, 'पचति भवति' अर्थात् 'पाक होता है' । इस वाक्य में दो क्रियाओं का प्रयोग हुआ है । अन्य वैयाकरणों का विचार है कि वाक्य के पद–पदांश का प्रकृति–प्रत्ययादि विभाग केवल व्यावहारिक है । इसी कारण वे वाक्य को अखण्ड तत्त्व मानते हैं और उसमें कोई अवयव या अंश स्वीकार नहीं करते । अतएव उनकी दृष्टि में वाक्य एक ओर अखण्ड शब्द है ।[4] इसके विपरीत कुछ विद्वान ऐसे भी हैं जो पद–समूह में रहने वाली जाति को वाक्य कहते हैं । उनका विचार

1– "आख्यातशब्दः संघातो जातिः संघातवर्तिनी ।
एकोऽनवयवः शब्दः क्रमो बुद्ध्यनुसंहृति ।।
पदमाद्यं पृथक् सर्वपदं साकांक्षमित्यपि ।
वाक्यं प्रति मतिर्भिन्ना बहुधा न्यायवादिनाम् ।। वाक्यपदीय, 2–1–2

2– "अर्थकत्वादेकं वाक्यम् ।" मीमांसासूत्र, 2–1–46
"एकार्थः पदसमूहो वाक्यम् –– मीमांसासूत्र, 2–1–46 पर शबरभाष्य ।

3– 'तिङ् ङ. तिङ. – अष्टाध्यायी, 8–1–28

4– अर्थविज्ञान और व्याकरण – दर्शन, 315

है कि शब्द जाति रूप है, नित्य है और वह पद-समूह में रहता है। जैसे भ्रमण एक क्रिया है, जिसकी अभिव्यक्ति विशेष प्रयत्न द्वारा उत्पन्न पाद-संचालन से ही होती है और यह क्रिया प्रत्येक पैर के रखने के साथ समाप्त हो जाती है। उस समाप्ति के पास बैठा व्यक्ति नहीं जान पाता। अतः प्रत्येक पैर के रखने के साथ समाप्त होने वाली क्रिया जाति रूप भ्रमण क्रिया का अंग है और कई बार भ्रमण करने पर भ्रमण करने वाले को यह ज्ञात होता है कि भ्रमण एक क्रियात्मक जाति है।[1] इसके अतिरिक्त पतंजलि ने इस बात की ओर भी ध्यान आकर्षित किया है कि वाक्य सदैव क्रियायुक्त ही नहीं होता, अपितु कभी-कभी बिना क्रिया के भी पूरा वाक्य बोला जाता है। जैसे 'तर्पणम्' 'पिंडीम्' आदि पद बिना क्रिया के ही 'तर्पण करो' 'ग्रास खाओ' आदि अर्थ के द्योतक हैं और पूरे वाक्य हैं।[2]

इस प्रकार विविध भारतीय विद्वानों के वाक्य सम्बन्धी लक्षणों पर अध्ययन करने पर यही ज्ञात होता है कि केवल ऐसा शब्द-समूह ही वाक्य नहीं होता, जो एक ही क्रिया द्वारा अभिहित अर्थ की प्रतीति कराता है, न केवल वह शब्द-समूह ही वाक्य है जिसमें योग्यता, आकांक्षा तथा संन्निधि होती है, न अनेक क्रियाओं वाले शब्द-समूह को ही केवल वाक्य कहते हैं, न कारक युक्त क्रिया ही केवल वाक्य कहलाती है, न केवल क्रिया, कारकादि के समूह में रहने वाली जाति को वाक्य कहते है, न केवल पद-क्रम ही वाक्य होता है और न क्रियादि के

1— "अर्थविज्ञान और व्याकरण - दर्शन", 315

2— महाभाष्य, 1-1-44

अखण्डनीय बुद्धिगत समन्वय को ही वाक्य कहते हैं, अपितु क्रिया के बिना भी वाक्य होता है, विविध संज्ञा, विशेषण, क्रियाविशेषण आदि से रहित भी वाक्य होता है अथवा एक पद का भी वाक्य होता है । इस दृष्टि से वाक्य का लक्षण यह हो सकता है कि 'जो पद या पद–समूह अभीष्ट अर्थ की प्रतीति कराने में समर्थ हो उसे वाक्य कहते हैं ।' जैसे, यदि कोई द्वार पर खड़ा व्यक्ति मार्ग में जाते हुए 'मोहन' को अपने समीप आने के लिए पुकारता है – 'मोहन !' तो यह 'मोहन' संज्ञापद अकेला होता हुआ भी पूरा वाक्य है । यदि छोटा बच्चा रोता–रोता, 'पानी' या 'रोटी' कहता है, तो वह भी इन दोनों पदों द्वारा वाक्य का ही उच्चारण करता है । अतएव 'मोहन' 'पानी' 'रोटी' आदि उक्त पद क्रिया के बिना ही उच्चरित किये गए है, फिर भी पूरे वाक्य हैं । इससे सिद्ध हुआ कि वाक्य के लिए क्रिया का होना आवश्यक नहीं है । वैसे कहीं–कहीं अकेली क्रिया ही वाक्य होती है । जैसे यदि हम किसी व्यक्ति से अपने यहाँ से जाने के लिए कहते हैं –– 'जाओ' तो यह 'जाओ' क्रिया–पद पूरा वाक्य है । अतएव वाक्य के लिए पूर्ण अर्थ का द्योतक 'पद' अपेक्षित होता है, फिर वह चाहे क्रिया, सर्वनाम, संज्ञा, क्रियाविशेषण आदि कोई क्यों न हो । इसलिए यह मानना सर्वथा उपयुक्त है कि 'अभिहित अर्थ की प्रतीति कराने में समर्थ पद या पद–समूह को वाक्य कहते हैं ।

वाक्य सम्बन्धी सिद्धान्त :— भारत के सुप्रसिद्ध मीमांसक वाचस्पति मिश्र ने वाक्य एवं वाक्यार्थ पर विचार करते हुए उन सुप्रसिद्ध पाँच मतों का उल्लेख किया है, जिनकी चर्चा भारतीय विद्वानों में अधिक रही है और जो वाक्य सम्बन्धी सिद्धान्तों के द्योतक हैं । वे पाँच मत इस प्रकार हैं :—

1/ स्फोटवाद — पहला मत उन स्फोटवादी वैयाकरणों का मिलता है, तो वाक्य को सर्वथा अखण्ड स्फोट मानते हैं और वे वाक्य में पद, पदांश, वर्ण आदि का विभाग स्वीकार नहीं करते । उनका मत है कि वक्ता सदैव अखण्ड वाक्य का प्रयोग करता है और किसी भी वाक्य में पद, पदांश आदि का कोई पारमार्थिक अस्तित्व नहीं होता । इससे इस मत को 'स्फोटवाद' के नाम से अभिहित किया जाता है ।

2/ अन्तिमवर्णवाद — दूसरा मत उन प्राचीन मीमांसकों तथा नैयायिकों का है, जो वाक्य के लिए स्फोट जैसी किसी अन्य वस्तु की कल्पना नहीं करते, अपितु वाक्य में वर्णों और पदों की स्थिति स्वीकार करते हैं । उनका कथन है कि वाक्य में स्थित वर्णों का उच्चारण करने पर श्रोता के द्वारा उनका श्रवण किया जाता है । उस समय एक या अनेक सुने हुए वर्ण पद के रूप में सम्बद्ध नहीं होते । अतः श्रोता उन्हें सम्बद्ध करके पद-व्यापार के द्वारा तथा स्मृति के द्वारा अन्य पदों के अर्थों का सम्बन्ध लगा लेता है । तब पदों का परस्पर सम्बन्ध करते हुए वाक्य की प्रतीति होती है । इस प्रकार पूर्वपद-पदार्थ- संस्कार युक्त अन्तिम वर्ण का ज्ञान ही वाक्यार्थ ज्ञान का निमित होता है । इस दृष्टि

से इस मत को 'अन्तिमवर्णवाद' के नाम से पुकारासकते हैं ।

3/ वर्णसमूहवाद :— जीसरा मत उन मीमांसकों का है, जो यह मानते हैं कि बड़े-बूढ़े लोग जिस अर्थ में जिस शब्द का प्रयोग करते चले आये हैं उसी से हमें पद-पदार्थ या वाक्य-वाक्यार्थ का बोध होता है । बड़े बूढे केवल व्यवहार के लिए पद का प्रयोग नहीं करते । अपितु वाक्य का प्रयोग करते हैं और यह वाक्य अखण्ड नहीं होता अपितु स्मृति में स्थित वर्णों का समूह या वर्णमाला ही होता है यह वर्णमाला ही वाक्य है । इस दृष्टि से इस मत को 'वर्णसमूहवाद' कह सकते हैं ।

4/ अन्विताभिधानवाद :— चौथा मत सुप्रसिद्ध मामांसक प्रभाकर का है, जो यह मानते हैं कि न तो वाक्य अखण्ड या स्फोट ही है, न अन्तिम वर्ण को ही वाक्य कहना उचित है और न वर्णमाला ही वाक्य है, अपितु वाक्य का निर्माण करने के लिए सबसे पहले तो पद आकांक्षित आसन्न तथा योग्य होने के कारण परस्पर अन्वित होते हैं, तदनन्तर वे वाक्य बनाते हैं । इसलिए पद की कोई पृथक् सता नहीं है, अपितु वाक्य ही सब कुछ होता हैं और पद या वर्ण तो काल्पनिक होते हैं । प्रभाकर का यह मत 'अन्विताभिधानवाद' कहलाता है ।

5/ अभिहितान्वयवाद — पाँचवा मत सुप्रसिद्ध मीमांसक, कुमारिल भट्ट का है, जो यह मानते हैं कि सभी पदों का अपना-अपना अस्तित्व होता है और उन पदों के योग से ही वाक्य बनता है, क्योंकि पहले पद पदार्थों को प्रतीति कराते हैं और फिर आकांक्षा, योग्यता तथा

सन्निधि से युक्त होकर वे वाक्यार्थ का बोध कराते हैं । इस मत के अनुसार वाक्य में पद का सर्वाधिक महत्व है, क्योंकि यदि पद ही न होगा, तो वाक्य कैसे बनेगा ? जब पदों में आकांक्षा, योग्यता और सन्निधि होती है, तभी उन पदों के योग से अभीष्ट अर्थ के प्रतिपादक वाक्य की निष्पत्ति होती है । इस दृष्टि से वाक्य प्रधान नहीं है, अपितु पदों का अन्वय ही प्रधान है । इसी कारण इस मत को 'अभिहितान्वयवाद' कहा जाता है ।

उक्त सभी सिद्धान्तो का अध्ययन करने पर यही निष्कर्ष निकलता है कि पद और वाक्य का अटूट सम्बन्ध है, क्योंकि पद से ही वाक्य बनता है । यह दूसरी बात है कि वाक्य में पद की स्वतन्त्र सत्ता है या नहीं । परन्तु पद के बिना वाक्य की कल्पना नहीं की जा सकती, क्योंकि एक पद का अनेक पदों का योग हो तो वाक्य होता है ।

वाक्य सम्बन्धी मान्यताओं की समीक्षा (भारतीय विद्वानो के संदर्भ में)

1— अधिकांश विद्वानों की मान्यता है कि 'वाक्य पदों का समूह होता है' वैसे देखा जाय तो यह विचार किसी सीमा तक ठीक है, क्योंकि जब हम यह कहते हैं कि 'राम गाँव जाता है', तब हम 'राम', 'गाँव' और 'जाता है' तीनों पदों का प्रयोग करते हैं और इन पदों के समूह से ही उक्त वाक्य बना है । ऐसे ही प्रायः अधिकांश वाक्य निर्मित होते हैं, किन्तु एक छोटा-सा बालक जब अपनी माँ को देखकर 'अट्टी' या 'पप्पा' कहता है, तब भी तो वह वाक्य ही बोलता है, क्योंकि

उसका 'अट्टी' कहने से अभिप्राय यह होता है कि 'मुझे रोटी दे दो' और 'पप्पा' कहने से यह अर्थ होता है कि 'मुझे पानी दे दो'। उक्त 'अट्टी' और 'पप्पा' वाक्यों में कहीं भी पद-समूह का प्रयोग नहीं हुआ है, अपितु केवल एक पद के द्वारा ही अपने अभिप्रेत अर्थ को अभिव्यक्त किया गया है। अतः सिद्ध है कि वाक्य पदों का ही समूह नहीं होता, अपितु एक पद का भी वाक्य होता है।

2— भारतीय विद्वानों की दूसरी मान्यता यह है कि 'वाक्य एक क्रिया वाला होता है'। इसे दूसरे शब्दों में यह भी कह सकते हैं कि जहाँ एक से अधिक क्रियाओं का प्रयोग होगा, वहाँ उतने ही विभिन्न वाक्य माने जाएँगे। जैसे 'राम जाता है' यह एक वाक्य है, क्योंकि इसमें एक 'जाता है' क्रिया का प्रयोग हुआ है और 'राम जाता है, खाता है, पीता है, सोता है और चला जाता है।' यहाँ पर पाँच वाक्य हैं, क्योंकि यहाँ 'आता है' 'खाता है' 'पीता है' 'सोता है' और 'चला जाता है' इन पाँच क्रियाओं का प्रयोग हुआ है तथा इन सभी क्रियाओं का कर्त्ता 'राम' है। परन्तु इस मत के विरुद्ध यह विचार भी मिलता है कि क्रियाओं से वाक्य का ज्ञान नहीं होता, अपितु प्रयोजन की एकता देखनी चाहिए अर्थात् जहाँ अर्थ या प्रयोजन की एकता हो, वहाँ भले ही कई क्रियाएँ हो, किन्तु वाक्य एक ही होता है। जैसे 'ओदनं पच, तव भविष्यति' अर्थात् 'भात पका, तेरा हो जाएगा'। इस वाक्य में 'पच' (पका) और 'भविष्यति' (हो जाएगा) — दो क्रियाओं का एक साथ प्रयोग हुआ है, परन्तु दो

क्रियाओं के रहते भी यह एक ही वाक्य है, क्योंकि यहाँ प्रयोजन एक है। परन्तु कुछ विद्वान यहाँ भी दो ही वाक्य मानते हैं। इसके अतिरिक्त एक यह उदाहरण भी मिलता है कि 'पूर्व स्नाति पचति, ततो व्रजति' अर्थात् 'पहले नहाता है, खाना पकाता है, फिर जाता है' यहाँ तीन क्रियाओं का प्रयोग हुआ है। अतः कुछ विद्वानों के मत से यहाँ तीन वाक्य होने चाहिए और कुछ के मत से प्रयोजन की एकता के कारण यहाँ एक ही वाक्य होना चाहिए, परन्तु यहाँ वास्तव में एक ही वाक्य हैं, क्योंकि यहाँ 'जाता है' तो मुख्य क्रिया है तथा 'नहाना' और 'खाना पकाना' गौण क्रियाएँ हैं और मुख्य क्रिया की विशेषता बतलाती है, क्योंकि भर्तृहरि का कथन है कि एक वाक्य में एक मुख्य क्रिया होती है और शेष क्रियाएँ यदि आती हैं तो वे गौण होती हैं।[1] इसके अनन्तर अब एक मत और भी प्रचलित है कि एक वाक्य में प्रायः एक ही क्रिया होता है, किन्तु कुछ ऐसे भी वाक्य होते है, जिनमें कोई भी क्रिया नहीं होती। जैसे ——

राम — सोहन, कल तुम कहाँ गए थे ?

सोहन — दिल्ली।

राम — दिल्ली से कब आये ?

सोहन — आज सवेरे।

उक्त वार्तालाप में 'दिल्ली' तथा 'आज सवेरे' दोनों ही वाक्य

1- वाक्यपदीय, 2-6, 2-251।

हैं किन्तु दोनों में ही क्रिया नहीं है । जबकि दोनों ही अपने अभीष्ट अर्थ या प्रयोजन को पूर्णतया अभिव्यक्त कर रहे हैं । अत: यह सिद्ध है कि प्राय: वाक्य एक क्रिया वाला होता है परन्तु ऐसा सदैव नहीं होता, कभी-कभी एक से अधिक क्रियाएँ भी एक ही वाक्य का निर्माण करने के लिए प्रयुक्त होती हैं और कभी-कभी बिना क्रिया के भी वाक्य बन जाता है ।

3- विद्वानों की वाक्य सम्बन्धी तीसरी मान्यता यह है कि 'वाक्य पूर्ण होता है' इस मान्यता के बारे में विचार करने पर ज्ञात होता है कि प्राय: वाक्य का प्रयोग किसी मनोभाव या अभिप्रेत अर्थ को अभिव्यक्त करने के लिए किया जाता है, परन्तु क्या एक वाक्य द्वारा कोई मनोभाव या अभिप्रेत अर्थ अभिव्यक्त हो जाता है ? जैसे यदि कोई भूखा व्यक्ति किसी से अपने खाने के लिए रोटी माँगता है कि 'मुझे रोटी दे दो' । तो क्या इस वाक्य द्वारा उसकी भूख का अभिप्राय प्रकट हो जाता है ? कभी नहीं, क्योंकि दूसरा व्यक्ति यह भी तो जान सकता है कि यह रोटी माँगने वाला भूखा नहीं है । अपितु मेरी रोटी मुझसे छीनना चाहता है और किसी कुत्ते या पशु को खिला देगा या फेंक देगा अथवा वाक्य से भूखे व्यक्ति का अभीष्ट मनोभाव कभी व्यक्त नहीं होता, अपितु उस मनोभाव का एक अंश ही प्रकट होता है । इसलिए किसी भी एक वाक्य को पूर्ण कहना नितान्त भूल है, क्योंकि भाव की अविछिन्न धारा को एक वाक्य के

लघु एवं संक्षिप्त घेरे में बांधना कभी सम्भव नहीं है । इस दृष्टि से एक वाक्य में आया हुआ मनोभाव तो उस पूर्णभाव का लघु खण्ड या अपूर्ण होता है । यदि अभिप्रेत अर्थ या मनोभाव को अभिव्यक्त ही करना है, तो उसके लिए एक नहीं, अनेक वाक्यों की आवश्यकता पड़ती है । इसलिए जब कोई अभिप्रेत अर्थ या मनोभाव किसी एक वाक्य में अभिव्यक्त ही नहीं हो सकता, तब फिर कोई एक वाक्य किसी अभिप्रेत अर्थ या मनोभाव को प्रकट करने में पूर्ण कैसे हो सकता है ? अतः अभीष्ट अर्थ या प्रयोजन को ध्यान में रखने पर यही ज्ञात होता है कि कभी कोई वाक्य पूर्ण नहीं होता ।

4— विद्वानों की वाक्य सम्बन्धी चौथी मान्यता यह है कि 'वाक्य अखण्ड होता है ।' इसके लिए चित्र का उदाहरण दिया जाता है और बतलाया जाता है कि जिस तरह चित्र में लाल, नीले, पीले अनेक रंग होते हैं और उनमें अनेक रूप भी होते हैं फिर भी चित्र सदैव एक और अखण्ड ही माना जाता है उसी तरह किसी वाक्य में एक से अधिक पद होते हैं, फिर भी वाक्य सदैव एक और अखण्ड ही होता है । भर्तृहरि ने वाक्य की एकता एवं अखण्डता का विवचन करते हुए समझाया है कि जिस प्रकार 'ऐ' और 'औ' सन्ध्यक्षरों में क्रमशः 'अ + ए' और 'अ + ओ' का योग रहता है, फिर भी इनको 'ऐ' और 'औ' के रूप में एक और अखण्ड ही माना जाता है, अथवा जैसे प्रकृति-प्रत्यय का विभाजन करके बच्चों को कोई पद समझाया जाता है, परन्तु वैसे

वह पद एक और अखण्ड ही होता है, उसी प्रकार वाक्य में वैसे तो कई पद रहते हैं, किन्तु वे पद अपना स्वतन्त्र अस्तित्व नहीं रखते, बल्कि उनकी कल्पना केवल वाक्य का बोध कराने के लिए की जाती है, अन्यथा वाक्य तो एक और अखण्ड ही होता है ।[1] परन्तु ध्यान से देखा जाए तो ज्ञात होगा कि प्रयोजन या अर्थ की दृष्टि से भले ही कोई वाक्य एक और अखण्ड हो, किन्तु वैसे तो उसमें पदों की ही प्रमुखता रहती है और वे पद ही आकांक्षा, योग्यता और सन्निधि के कारण परस्पर समन्वित होकर किसी वाक्य का निर्माण किया करते हैं । जैसे 'मोहन रोटी खाता है' यहाँ 'मोहन' 'रोटी' और 'खाता है' पदों की आकांक्षा, योग्यता और सन्निधि के कारण ही यह 'वाक्य' कहलाता है । यदि यहाँ पद न होते तो यह वाक्य नहीं बनता । इसलिए विविध प्रकार के पद ही वाक्य के निर्माता होते हैं और इस दृष्टि से पद-समूह की स्थिति में वाक्य को एक और अखण्ड नहीं माना जा सकता ।

5- विद्वानों की वाक्य सम्बन्धी पाँचवी मान्यता यह भी है कि 'वाक्य का पहला पद ही वाक्य होता है' इसलिए ये उदाहरण दिये जाते हैं कि 'देवदत्त गाय को हांक दो' और 'देवदत्त, गाय को बांध दो' । यहाँ इन दो वाक्योंम में दो 'देवदत्त' पद आये हैं और दोनो ही देवदत्त पृथक् पृथक् हैं । वैसे दोनों में समानता का भ्रम होता है ।

1- यथा पदे विभज्यन्ते प्रकृतिप्रत्ययादयः ।
अपोद्धारस्था वाक्ये पदानामुपवर्ण्यते ।।-- वाक्यपदीय, 2-10

क्योंकि दोनों एक जैसे ही नाम हैं । वैसे दोनों में समानता कार्य कर रहे हैं । पहले वाक्य में वक्ता ने देवदत्त को गाय हांकने के लिए कहा है और दूसरे वाक्य में देवदत्ता को गाय बांधने के लिए कहा है । अतएव पहले में देवदत्ता का सम्बन्ध गाय को हांकने से है और दूसरे में गाय को बांधने से । अतएव पहला देवदत्ता गाय हांकने की क्रिया से युक्त विशिष्ट अर्थ का द्योतक है और दूसरा देवदत्त गाय बांधने की क्रिया से युक्त विशिष्ट अर्थ का द्योतक है । अतएव प्रथम पद को ही वाक्य कहने का अभिप्राय यह है कि वाक्य का पहला पद ही वाक्य का सारा अर्थ बता देता है, क्योंकि वही पद सम्पूर्ण विशेषणों से युक्त होता है और उसी का प्रयोग सर्वप्रथम किया जाता है । इस मत पर आपत्ति यह है कि यदि वाक्य का प्रथम पद ही वाक्य मान लिया जाएगा तो वाक्य में प्रयुक्त अन्य पदों को व्यर्थ मानना पड़ेगा । जबकि वाक्य मे सभी पदों का अपना-अपना महत्व होता है । और सभी पद अपने-अपने अर्थ के द्योतक होते हैं । जैसे कोई पद कर्त्ता होता है, कोई पद कर्म होता है, कोई पद क्रिया होता है और फिर सभी मिलकर एक वाक्य का उसी प्रकार निर्माण करते हैं, जैसे राजा, मन्त्री, सेनापति, सभासद आदि सभी मिलकर एक राज्य-परिषद् को बनाते हैं । परन्तु जैसे राजा, मन्त्री, सेनापति, सभासद आदि को अपना पृथक् अस्तित्व भी होता है, वैसे ही अन्य पदों का भी पृथक् अस्तित्व होता है । अतएव जिस तरह केवल राजा को ही राज्य-परिषद् मानना उचित नहीं है, उसी

तरह वाक्य के पहले पद को ही वाक्य मानना तर्क संगत नहीं है ।

6- विद्वानों की वाक्य सम्बन्धी छटी मान्यता यह है कि 'क्रिया आदि पदों का एक विशेष क्रम ही वाक्य होता है ।' इसलिए यह उदाहरण दिया जाता है कि 'राम रोटी खाता है' वाक्य में एक विशिष्ट क्रम है । क्योंकि यहाँ पहले कर्त्ता (राम) आया है, फिर कर्म (रोटी) आया है, तत्पश्चात् क्रिया (खाता है) आई है तथा इसी क्रम से जब पदों का प्रयोग किया जाता है तभी वाक्य बनता है । परन्तु क्रम की एक रूपता सभी भाषाओं में नहीं मिलती । हिन्दी भाषा में तो पहले कर्त्ता, फिर कर्म और फिर क्रिया का प्रयोग होता है । जैसे 'राम गाँव को जाता है ।' परन्तु अंग्रेज़ी भाषा में पहले कर्त्ता, फिर क्रिया और तत्पश्चात् कर्म का प्रयोग होता है । जैसे - "

" इनके अतिरिक्त संस्कृत में ऐसा कोई क्रम ही नहीं है, क्योंकि वहाँ 'रामः ग्रामं गच्छति' 'गच्छति रामः ग्रामम्' 'ग्रामं गच्छति रामः' 'रामः गच्छति ग्रामम्' 'ग्रामंम रामः गच्छति' 'गच्छति ग्रामं रामः' आदि विविध क्रमों के अनुसार वाक्य लिखा जा सकता है और अर्थ में कोई अन्तर नहीं पड़ता । इस दृष्टि से यह निष्कर्ष निकलता है कि वाक्य रचना के लिए एक ही क्रम उपेक्षित नहीं है अर्थात् पहले कर्त्ता या पहले क्रिया या पहले कर्म आदि का आना ही आवश्यक नहीं है अपितु इनमें से कोई भी पद पहले और कोई भी पद पीछे आकर वाक्य का निर्माण कर सकता है, परन्तु क्रमबद्धता अवश्य रहनी चाहिए । यदि हम पदों को क्रमबद्ध न रख कर वैसे ही रखेंगे, तो कभी वाक्य नहीं बनेगा ।

जैसे — 'खाना' 'रोटी' 'राम' या 'ग्रामं' 'गच्छति' 'रामः' या 'राम' 'गाँव' 'जाता' आदि पदों को क्रमबद्ध न करके पृथक् – पृथक् व्यवहार करेंगे, तो इनके पृथक्–पृथक् रहने से कोई वाक्य नहीं बनेगा, अपितु क्रम–बद्ध करने पर ही वाक्य का निर्माण होगा । यह बात वहीं तक ठीक है जहाँ अनेक पद होते हैं, किन्तु जब एक ही पद से किसी वाक्य का निर्माण होता है, तब वहाँ किसी भी क्रम की आवश्यकता नहीं होती । जैसे —

राम – मोहन, हमारे घर पर कब आ रहे हो ?

मोहन– कल ।

मोहन के उक्त कथन में 'कल' एक ही पद पूरे वाक्य का निर्माण कर रहा है । अतएव इसके लिए किसी भी क्रम की आवश्यकता नहीं है, जबकि राम के कथन में विभिन्न पदों का प्रयोग हुआ है, वहाँ क्रम की आवश्यकता पड़ी है ।

7– भारतीय विद्वानों की वाक्य – सम्बन्धी सातवीं मान्यता यह भी है कि 'वाक्य आभ्यन्तर स्फोट तथा बुद्धिगत होता है ।' इनका तर्क यह है कि जब कोई वक्ता कुछ कहता है, तब जो ध्वनि वाक्य के रूप में बाहर प्रकट होती है वह आन्तरिक होती है तथा पहले से ही वक्ता की बुद्धि में रहती है । अतएव पूरा वाक्य एक ऐसा शब्द–तत्त्व है जो बुद्धिगत है, आभ्यन्तर स्फोट स्वरूप है, अव्यवहरित है, अखण्ड ज्ञान–रूप है, और अन्तरात्मा के रूप में सर्वथा विद्यमान रहता है । केवल उसकी शक्ति के

भेद से बाहर आने पर भिन्नता दिखाई दिदेया करती है । वैसे वाक्य अवयव रहित, अभिन्न और आभ्यन्तर स्फोट रूप होता है । इस मत के आधार पर वाक्यों को बुद्धिगत एवं स्फोट रूप मानने में तो कोई आपत्ति नहीं है और उसे नित्य भी कह सकते हैं, किन्तु व्यवहार में यह देखा जाता है कि जैसी परिस्थिति होती है, उसी के अनुकूल वक्ता का वाक्य का उच्चारण करता है, कभी वह प्रश्न करता है, कभी स्वीकारात्मक वाक्य का उच्चारण करता है, कभी निषेधात्मक वाक्य का प्रयोग करता है, कभी हर्ष सूचक वाक्य अथवा कभी शोक सूचक वाक्य बोलता है, इस प्रकार भले ही वाक्य बुद्धिगत हो, किन्तु उसकी बाह्य अभिव्यक्ति भी अवश्य होती है, क्योंकि कोई भी वाक्य केवल बुद्धि में स्थित रहने पर 'वाक्य' संज्ञा प्राप्त नहीं करता, जब तक कि वह उच्चरित होकर बाहर प्रकट नहीं होता । इस दृष्टि से जहाँ वाक्य को यह माना जाता है कि यह शब्द ब्रह्म की भाँति बुद्धिगत एवं आभ्यन्तर स्फोट है, वहाँ हमें यह भी मानना पड़ेगा कि वह ध्वनि-तरंगों के द्वारा मुख से बाहर निकलता है, दूसरों के लिए कर्ण गोचर होता है और अपना एक बाह्य रूप भी ग्रहण करता है । अतएव कोई भी वाक्य जब उच्चरित किया जाता है, तब वह केवल आभ्यन्तर एवं बुद्धिगत ही नहीं रहता, अपितु बाह्य अभिव्यक्ति रूप भी होता है ।

सारांश यह है कि वाक्य सम्बन्धी भारतीय विद्वानों की मान्यताओं में परस्पर विरोधी बातें, पर्याप्त मात्रा में मिलती हैं,

क्योंकि वाक्य में अनेक पद भी होते हैं और एक पद भी होता है, वाक्य में अनेक क्रियाएँ भी होती हैं और एक क्रिया भी होती है, वाक्य में एक क्रिया भी होती है और बिना क्रिया का भी वाक्य होता है, वाक्य पूर्ण भी होता है और अपूर्ण भी होता है, वाक्य अखण्ड भी होता है और उसमें विविध खण्ड भी होते हैं, वाक्य के प्रथम पद से ही पूरे वाक्य का बोध होता है और नहीं भी होता है, वाक्य में एक विशिष्ट क्रम भी होता है और कोई भी क्रम नहीं होता तथा वाक्य बुद्धिगत एवं आभ्यन्तर स्फोट रूप भी होता है और उसका स्पष्ट बाह्य रूप भी होता है । परन्तु इतना होने पर भी वाक्य के बारे में एक बात निर्विवाद रूप से देखी जाती है कि वाक्य सदैव प्रयोजन एवं अर्थ की दृष्टि से अखण्ड एवं एक होता है ।

वाक्य के मूलाधार :

प्राय: विभिन्न सार्थक पदों का व्यवहार ही वाक्य के निर्माण में सहायक होता है, किन्तु जब हम अपने मनोभावों को व्यक्त करने के लिए पदों का उच्चारण करते हैं और वे पद किसी वाक्य का निर्माण करते हैं, तब उस वाक्य को किन आधारों पर 'वाक्य' संज्ञा प्रदान की जाती है ? इस प्रश्न पर विचार करते हुए प्राचीन भारतीय विद्वानों ने वाक्य के तीन मूल आधार निश्चित किए हैं -- आकांक्षा, योग्यता और सन्निधि ।[1]

---

1 — 'वस्तुतस्तु आकांक्षायोग्यतासन्निधिवशादेकवाक्यतां गतं वाक्यं बोद्धव्यम् ।' — पुष्पराज — "भाषाविज्ञान के सिद्धान्त" पृ०-14

1— आकांक्षा — अर्थ की अपूर्णता का नाम 'आकांक्षा' है, क्योंकि किसी भी वाक्य के अर्थ को पूरा करने के लिए अन्यान्य पदों की अपेक्षा या जिज्ञासा का बना रहना ही 'आकांक्षा' कहलाता है । जैसे यदि कोई व्यक्ति अपने मुख से 'सरोवर' कहकर चुप हो जाता है तो 'सरोवर' शब्द को सुनकर किसी भी श्रोता को वक्ता का अभिप्राय ज्ञात नहीं होता । वह यह सुनना चाहता है कि वक्ता सरोवर के बारे में कुछ कहे । अतएव 'आकांक्षा' का सम्बन्ध श्रोता की मानसिक स्थिति से होता है क्योंकि श्रोता किसी भी शब्द को वक्ता से सुनकर उसके बारे में पूर्ण रूप से कुछ न कुछ और सुनने की अभिलाषा किया करता है । जब कोई वक्ता 'सरोवर' कहकर चुप हो जाता है या 'सरोवर में' पद का उच्चारण करके चुप रह जाता है, तब इससे न तो वक्ता का ही अभिप्राय स्पष्ट होता है और न श्रोता की ही जिज्ञासा शान्त होती है, किन्तु जब वक्ता 'सरोवर' में कमल खिल रहे हैं' इस तरह से पूरे वाक्य का उच्चारण श्रोता के सम्मुख कर देता है, तब तक ओर तो वक्ता का अभिप्राय व्यक्त हो जाता है और दूसरी ओर श्रोता की जिज्ञासा भी शान्त हो जाती है । अतएव आकांक्षा वाक्य का मूलाधार है, जिसके द्वारा वाक्यार्थ की हो पूर्ति नहीं होती, अपितु श्रोता की जिज्ञासा भी पूर्ण होती है ।

2— योग्यता — पदों के परस्पर अन्वय में किसी भी प्रकार की बाधा का न होना 'योग्यता' कहलाता है । यह बाधा दो प्रकार से आया

करती है । अर्थ की दृष्टि से और पद-विन्यास की दृष्टि से । अर्थ की दृष्टि से बाधा वहाँ उपस्थित हुआ करती है, जहाँ किसी वाक्य में प्रयुक्त पदों में किसी अर्थ के प्रकाशन की योग्यता नहीं होती । जैसे 'दीवार खाती है' 'मकान उड़ता है', 'राम हल से रोटी खाता है' आदि वाक्यों में अर्थ की दृष्टि से बाधा विद्यमान है, क्योंकि कहीं भी दीवार को खाने की क्रिया करते हुए, मकान को उड़ते हुए, तथा हल से किसी को रोटी खाते हुए नहीं देखा जाता । अतएव उक्त वाक्य व्याकरण की दृष्टि से अथवा पद-विन्यास की दृष्टि से ठीक हैं किन्तु अर्थ की दृष्टि से ठीक नहीं है, क्योंकि इनमें पदार्थों के परस्पर अन्वय में अथवा सम्बन्ध स्थापित करने में बाधा उपस्थित हो रही है । इसके स्थान पर यदि यह कहें कि 'लड़की खाती है' 'कौआ उड़ता है' 'राम साग से रोटी खाता है' आदि तो पदों के परस्पर सम्बन्ध स्थापित करने में या अर्थ को जानने में कोई बाधा नहीं होगी ।

इसी तरह पद-विन्यास की दृष्टि से भी वाक्य में बाधा आया करती है जैसे कोई कहे कि 'घोड़ी नाचता है' लड़के भागता है' हम खाता है' तथा 'श्याम ने गाता है' तो इन वाक्यों में से प्रथम 'घोड़ी नाचता है' वाक्य में लिंग सम्बन्धी अयोग्यता है, क्योंकि यहाँ स्त्रीलिंग 'घोड़ी' के पुलिंग क्रिया 'नाचता है' का प्रयोग किया गया है । दूसरे 'लड़के भागता है' वाक्य में वचन सम्बन्धी अयोग्यता है,

क्योंकि यहाँ स्त्रीलिंग 'घोड़ी' के लिए पुलिंग क्रिया 'नाचता है' का प्रयोग किया गया है । दूसरे 'लड़के' भागता है' वाक्य में वचन सम्बन्धी अयोग्यता है, क्योंकि यहाँ 'लड़के' पद बहुवचन है, जबकि 'भागता है' क्रिया एकवचन की प्रयुक्त हुई है । तीसरे 'हम खाता है' वाक्य में पुरुष सम्बन्धी अयोग्यता है, क्योंकि 'हम' पद उत्तम-पुरुष का बहुवचन है, जबकि यहाँ क्रिया मध्यम-पुरुष एवं अन्य-पुरुष के एकवचन की प्रयुक्त हुई है । चौथे 'श्याम ने गाता है' वाक्य में विभक्ति-सम्बन्धी अयोग्यता है, क्योंकि 'ने' विभक्ति का प्रयोग भूतकाल की क्रिया में ही होता है । वर्तमान काल की क्रिया के साथ नहीं होता । यहाँ यदि 'घोड़ी नाचती है' 'लड़के भागते हैं' 'वह खाता है' और 'श्याम गाता है' वाक्य होते तो उनका परस्पर सम्बन्ध स्थापित करने में या पदार्थों के परस्पर अन्वय में कोई बाधा उपस्थिति न होती । इसलिए 'योग्यता' भी वाक्य निर्माण का मूल आधार मानी जाती है ।

3– सन्निधि -- इसे 'आसक्ति' भी कहते हैं । इसका साधारण अर्थ है समीपता अर्थात् एक पद के सुनने के पश्चात् उच्चरित अन्य पदों के सुनने के समय में सम्बन्ध-ज्ञान का बना रहना 'सन्निधि' कहलाता है । इसका अभिप्राय यह है कि जब कोई वक्ता किसी वाक्य का उच्चारण करता है, तब उसे उस वाक्य के प्रत्येक पद के उच्चारण में अधिक समय नहीं लगाना चाहिए । जैसे यदि कोई वक्ता प्रातः 'सरोवर' कहता है, मध्याह्न

काल में आकर 'बड़ा' कहता है और सायंकाल में आकर 'सुन्दर है' कहता है तो उसके द्वारा उच्चरित इन पदों से वाक्यों के अर्थ-बोध में आपत्ति उपस्थित होगी, क्योंकि ये सभी पद पर्याप्त समय के बाद बोले गए हैं। यदि इन पदों को एक समय में ही 'सरोवर बड़ा सुन्दर है' कहा जाएगा, तो एक ओर तो इन पदों के उच्चारण में, समय का व्यवधान नहीं पड़ेगा और दूसरी ओर इनके अर्थ-बोध में भी आपत्ति उपस्थित नहीं होगी। अतएव 'सन्निधि' से अभिप्राय यही है कि वाक्य के सभी पदों का उच्चारण एक ही समय में होना चाहिए अर्थात् एक पद के उपरान्त दूसरे पद का, दूसरे के उपरान्त तीसरे पद का, तीसरे के उपरान्त तुरन्त चौथे पद का आदि का उच्चारण होना चाहिए, जिससे वे एक-दूसरे के सन्निकट रहें और अधिक दूर न पड़ जाएँ। यही कारण है कि 'सन्निधि' को भी वाक्य-निर्माण का मूलाधार माना जाता है।

अतः यह स्पष्ट है कि जब वाक्य का निर्माण किया जाता है, तब यह देखना पड़ता है कि वाक्य के पदों में 'आकांक्षा' तो शेष नहीं है, उनमें वाक्यार्थ प्रकट करने की पूर्ण 'योग्यता' है, सभी पदों में 'सन्निधि' विद्यमान है। उक्त तीनों बातों की पूर्ति होने पर ही कोई वाक्य अपने अभीष्ट अर्थ की अभिव्यक्ति में सफल होता है, उसमें 'एकवाक्यता' का गुण आ जाता है, वह बुद्धिगत समन्वय को प्राप्त होता है और विविध पदों के रहते हुए भी वह एक चित्र की भाँति अखण्ड वाक्यार्थ का बोध कराता है।

ख़) वाक्य के सम्बन्ध में पश्चिमी विद्वानों की धारणाएँ :

जिस प्रकार पतंजलि ने इस बात की ओर भी ध्यान आकर्षित किया है कि वाक्य सदैव क्रिया युक्त ही नहीं होता, अपितु कभी–कभी बिना क्रिया के भी पूरा वाक्य बोला जाता है । जैसे – 'तर्पणाम्' 'पिंडीम्' आदि पद बिना क्रिया के ही 'तर्पण करो' 'ग्रास खाओ' आदि अर्थ के द्योतक हैं और पूरे वाक्य हैं ।[1] यही बात यूनानी विद्वान अरस्तू ने भी बतलाई है कि वाक्स में क्रिया का होना कोई आवश्यक नहीं है । वैसे प्रायः वाक्य का निर्माण संज्ञा, क्रिया आदि पदों द्वारा होता है, किन्तु बिना क्रिया के भी वाक्य हो सकता है ।[2]

यूरोपीय विद्वान थ्रैक्स 'पूर्ण प्रतीति कराने वाले शब्द समूह को वाक्य' मानते हैं । उपर्युक्त परिभाषा में दो बातें प्रमुख हैं —

1/ वाक्य शब्दों का समूह है ।

2/ वाक्य पूर्ण होता है ।

"वाक्य शब्दों का समूह है" इस कथन से यह स्पष्ट है कि वाक्य एक से अधिक शब्द होते हैं । पर यह बात बहुत ठीक नहीं है । एक शब्द के भी वाक्य होते हैं +— यथा —

तुम कब आओगे ?

कल !

1– महाभाष्य, 1 – 1. 44 ।

2– 'And a sentence is a composite significant sound, of which certain parts of themselves signify something, for not every sentence is composed from nouns and verbs, but there may be a sentence without verbs.'
— Poetics, chapter XX [illegible]

क्या मोहन गया ?

हाँ ।

यहाँ 'कल' एवं 'हाँ' वाक्य का कार्य कर रहे हैं पर ये शब्दों के समूह नहीं हैं ।

अर्थ की दृष्टि से वाक्य की पूर्णता भी कम विवादास्पद नहीं है । उसे पूर्णतः पूर्ण नहीं कहा जा सकता । प्रायः हम अपने किसी भाव को कई वाक्यों के माध्यम से व्यक्त करते हैं । अतएव निश्चय ही ये वाक्य पूरे भाव के खण्ड मात्र हैं, अतः अपूर्ण हैं । भाव एक अविच्छिन्न धारा है, वाक्य उसका एक खण्ड मात्र ।

वाक्य के सम्बन्ध में ब्लूम फील्ड की धारणा इस प्रकार है -- "किसी भी उच्चार में एक भाषिक रूप या तो किसी अपने से महत्तर किसी संरचना के रूप में भी (जैसे John ran away में John) आता है या स्वतन्त्र रूप में बिना किसी महतर (मिश्र) भाषिक रूप मे अन्तर्विष्ट हुए (जैसे उद्गारात्मक John में John) आता है । जब एक भाषिक रूप अपने से महत्तर रूप का अवयव बनकर आता है तो उसे अन्तर्विष्ट स्थान में मानते हैं, अन्यथा वह निरपेक्ष स्थान में कहलाता है । निरपेक्ष स्थान में आए हुए भाषिक रूप द्वारा वाक्य बनता है ।[1]

किसी एक उच्चार में वाक्य रूप में आने वाला रूप किसी दूसरे उच्चार में अन्तर्विष्ट स्थिति में हो सकता है । अभी उदाहरण में

1- " भाषा " - ब्लूमफील्ड अनु- डॉ० विश्वनाथ प्रसाद, पृ०-199

उद्गारात्मक John ! में John वाक्य है, किन्तु उद्गार Poor John ! में John एक अन्तर्विष्ट स्थिति में है । इस दूसरे उदाहरण में Poor John वाक्य-स्थिति में है किन्तु उच्चार Poor John ran away

में वह अन्तर्विष्ट स्थिति में है । अथवा अन्तिम उदाहरण में Poor John ran away वाक्य-स्थिति में है किन्तु उच्चार when the dog barked Poor John ran away में वह अन्तर्विष्ट स्थिति में है ।[1]

एक उच्चार में एक से अधिक वाक्य भी हो सकते हैं । ऐसा तब होता है जब उच्चार में अनेक ऐसे भाषिक रूप होते हैं जो किसी अर्थ पूर्ण परम्परागत व्याकरणिक विन्यास (अर्थात् किसी रचना) द्वारा एक महतर रूप में संयोजित नहीं हुए हैं, जैसे How are you ? It is a fine day. Are you going to play tennis? इन तीनों वाक्यों में कोई व्यावहारिक परस्पर सम्बन्ध भले ही हो, इन तीनों को एक महतर रूप में संयोजित करने वाला कोई व्याकरणिक विन्यास नहीं है । अतः उच्चार में तीन वाक्य हैं ।[2]

अतः यह स्पष्ट है कि किसी भी उच्चार में वाक्यों का केवल इस आधार पर पृथक् करना हो सकता है कि प्रत्येक वाक्य एक स्वतन्त्र भाषिक रूप है और वह किसी व्याकरणिक रचना द्वारा अपने से महतर रूप में अन्तर्विष्ट नहीं है । अधिकांश सम्भवतः सभी, भाषाओं में

1- "भाषा" - ब्लूमफील्ड अनु० डॉ० विश्वनाथ प्रसाद, पृ०-199
2- - वही - पृ०-200

अनेक विन्यासिम (taxeme) होते हैं जो वाक्य को पृथक्-पृथक् करते हैं और फिर जिनके आधार पर वाक्य के विभिन्न प्रति-रूपों (types) की पहिचान बनाते हैं ।[1]

आगे ब्लूमफील्ड बताते हैं कि कदाचित् सभी भाषाएँ दो प्रकार के वाक्य-प्रतिरूपों में भेद अवश्य रखती हैं जिन्हें पूर्ण वाक्य (full-sentence) और अपूर्ण-वाक्य (minor-sentence) कहते हैं । इनमें भेद चयन के द्वारा होता है -- कुछ रूप सर्वाधिक प्रचलित वाक्य रूप (Favourite sentence form) हैं । जब सर्वाधिक प्रचलित वाक्य-रूप वाक्य के समान प्रयुक्त होता है, तो वह पूर्ण वाक्य हैं, जब अन्य रूप वाक्य के समान प्रयुक्त होता है तो वह अपूर्ण वाक्य होता है ।

पश्चिमी विद्वानों ने वाक्य की जितनी परिभाषाएँ दी हैं, वे सारी वाक्य को संरचनात्मक व्यवस्था पर ही बल देती हैं । हाकेट ने वाक्य की परिभाषा यूँ दी है "वाक्य रूपिमों की व्यवस्था है । भाषा शब्द रूपों की व्यवस्था है, जिसके द्वारा सार्थक निष्कर्षों की सृष्टि होती है ।"[2] इस परिभाषा में भाषा की व्यवस्था पर ज़ोर दिया गया है । यह व्यवस्था रूपिम संरचना की है । भाषा में कहीं-कहीं निरर्थक शब्दों का प्रयोग भी होता है जैसे -- चाय - वाय, लोटा - वोटा आदि ।

---

2. "Language is a sequence of morphemes to give rise to meaningful conclusions." — Hockett - A course in Modern Linguistics P. 144.

ब्लूमफील्ड् के अनुसार :– 'वाक्य एक स्वतन्त्र रूप है जो किसी भी व्याकरणात्मक रचना के कारण किसी भी बृहत्तर भाषात्मक 'रूप' (आकृति) में अन्त:निविष्ट नहीं होता' इसे समझाने के लिए वे यह उदाहरण देते हैं: "आप कैसे हैं ? —— दिन अच्छा है । —— क्या आप आज अपराह्न में टैनिस खेलेंगे ?" और आगे कहते हैं — 'इन तीनों 'रूपों' के बीच भले ही कोई व्यावहारिक सम्बन्ध विद्यमान हो, इन्हें एक बड़ी इकाई में आबद्ध करने के विषय में कोई व्याकरणात्मक व्यवस्था नहीं है । अर्थात् ये तीनों स्वतन्त्र वाक्य हैं ।'[1] इस परिभाषा में निहित बात को अधिक पूर्णता और संक्षेप के साथ इस रूप में कहा जा सकता है : "वाक्य व्याकरण वर्णन की सबसे बड़ी इकाई है ।' वाक्य एक ऐसी व्याकरणात्मक इकाई हैं जिसके घटक अंशों को तो वितरणात्मक में सीमाओं में बांटा जा सकता है, किन्तु उसे स्वयं किसी वितरण-श्रेणी में नहीं रखा जा सकता । दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि वितरण की वह धारणा जिसका आधार स्थान पन्नता पर स्थित है, वाक्य पर लागू नहीं होती । अब इसी उदाहरण को ले लें । जब तक हम अधिक व्यापक संदर्भ पर विचार न करें, यह कहना निरर्थक है कि इनमें से किसी वाक्य की जगह यथा —'दिन अच्छा है' के स्थान पर कोई अन्य 'रूप' स्थानपन्न किया जा सकता है । यदि हम व्यापकतर संदर्भ को ध्यान में लें, तब भी ब्लूमफील्ड् जिसे इन तीनों

1– "सैद्धान्तिक भाषा विज्ञान" जान लियोन्स अनु० सत्यकाम शर्मा, प्रकाशक – मुन्शीराम मनोहरलाल, नई दिल्ली ।

के बीच 'व्यावहारिक सम्बन्धत बताते हैं' उसे वितरणात्मक चुनाव के सामान्य नियमों के अन्तर्गत निबद्ध नहीं किया जा सकता । यही नहीं 'दिन अच्छा है' के घटक अवयव व्यापक सन्दर्भ की दृष्टि से प्राक्कथनीय नहीं हैं, बल्कि यह कहना भी सम्भव नहीं है कि 'प्रश्न' के स्थान पर 'वक्तव्य' ही आएगा । यदि इन तीनों को मिलाकर 'आप कैसे हैं ?' 'दिन अच्छा है' क्या आप आज अपराह्न में टैनिस खेलेंगे ?' के रूप में कहें भी तब भी ये तीनों ही वितरणात्मक दृष्टि से एक दूसरे से स्वतन्त्र और परस्पर अनाश्रित हैं । इसी कारण इन्हें 'तीन वाक्य' स्वीकार किया जाता है ।

नॉमचोमस्की का कथन हैं कि न तो सांख्यकीय निरन्त्रय न अर्थगत महत्व इस बात को निश्चित करता है कि एक वाक्य व्याकरणिक है या अव्याकरणिक । इस बात पर निर्भर करता है कि क्या इसकी अन्तर्वर्ती संरचना व्याकरण के द्वारा व्याख्यापित है ।[1]

चामोस्की का रूपांतरण व्याकरण यह मान कर चलता है कि अंग्रेज़ी वाक्य के अन्तर्गत चाहे वह मिश्र हो क्यों न हो, हम एक गहरीय संरचना देखते हैं जो एक या एक से अधिक बीज वाक्यों के लिस्ट द्वारा प्रतिनिधित्व पाती है जो सरल और उद्घोषित मानी जाती है । एक साधन या दूसरे साधन द्वारा स्पष्ट या अस्पष्ट रूप

1- Chomsky, N.M., 1971; "Linguistic Theory Selected Readings, Ed by J.P.B. Allen and P.V. Buren. O.U.P.

से हमें बीज वाक्य की पहचान करनी चाहिए । हमें अनौचत्य से सावधान रहना चाहिए जो कि इसके प्रति समर्पित होता है । हमारी इन सम्भावनाओं की सहजानुभूति व्याकरणीय और अव्याकरणीय का अन्तर स्थापित कर सकती है । आधार–भूत या बीज वाक्य में रूपांतरण करके रूपांतरित वाक्य बनते हैं । चॉमस्की के अनुसार बोलने के पहले कुछ मूलभूत चीज़ें मनुष्य के मस्तिष्क में आती हैं तथा उनमें रूपांतरण करके व्याकरणिक दृष्टि से शुद्ध वाक्य बनाए जाते हैं । यदि ऐसा रूपांतरण न करें तो जो वाक्य बनेगा अशुद्ध या अव्याकरणिक होगा । ऐसे रूपांतरण को अनिवार्य '(ऑब्लिगेटरी) कहते हैं । उसके बाद अपनी इच्छा से जो रूपांतरण किए जाते हैं वे ऐच्छिक (ऑप्शनल) कहलाते हैं । इन्हें वक्ता चाहे तो करें औड न चाहें तो न करें ।[1] उदाहरण के लिए कोई कहना चाहे कि 'राम स्कूल जाता है' तो उसके मस्तिष्क में संज्ञा पदबन्ध + क्रिया पदबन्ध पहले आता है । संज्ञा पदबन्ध में भी 'राम' तथा क्रिया पदबन्ध में सहायक (ता है), क्रिया (जा) तथा (दूसरा) संज्ञा पदबन्ध (स्कूल) है । सहायक में 'काल' पहलें आएगा फिर 'वर्तमान' क्रिया में 'जाना' तथा क्रिया पदबन्ध में दूसरा संज्ञा पदबन्ध 'स्कूल' । इसके बाद प्रत्येक भाषा की वाक्य रचना के नियमों के अनुसार इसमें अनिवार्य रूपांतरण होगा और तब अंग्रेज़ी Ram से Ram goes to school या हिन्दी में इन्हीं के आधार

पर 'राम स्कूल जाता है' बनेगा । इस प्रकार के रूपांतरण अनिवार्य होते हैं । इनसे कर्तृवाच्य के सामान्य, निषेध-बोधक या प्रश्न-बोधक वाक्य बनते हैं । फिर ऐसे वाक्यों से जो रूपांतरण करके कर्मवाच्य तथा भाव-वाच्य के मिश्र वाक्य तथा संयुक्त वाक्य आदि बनते हैं । ऐसें रूपांतरण ऐच्छिक कहलाते हैं । उदाहरण के लिए कोई व्यक्ति कह सकता है - 'राम ने पत्र लिखा' या फिर वह चाहे तो इसका कर्मवाच्य बनाकर वह कह सकता है 'पत्र राम के द्वारा लिखा गया' । चॉमस्की प्रश्न एवं निषेध वाक्यों को भी मूल मानते हैं ।

- 0 -